शिक्षा में निर्णय-प्रक्रिया के विकेन्द्रीकरण पर आघात

प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण एवं उसकी गुणवत्ता के सुधार में बहुत बाधायें आती रही हैं । इस तरफ यथोचित प्रतिबद्धता एवं संकल्प के साथ प्रयासों की कमी भी रही है । गुणवत्ता के निरंतर ह्रास एवं सार्वजनीकरण की धीमी गति के प्रमुख कारणों में से एक कारण बड़े कार्यक्रमों में जनभागीदारी एवं सुविचारित विकेन्द्रीकरण की कमी भी रहा है। राजस्थान में लोक जुम्बिश परियोजना का आरंभ इस दिशा में एक समर्थ एवं सार्थक पहलू रहा है। इस परियोजना ने निर्णय प्रक्रियाओं को विकेन्द्रित करने के लिए विभिन्न स्तर पर ढांचागत परिवर्तन किये । गांव के स्तर पर शिक्षा नियोजन में गांव के लोगों की पहल एवं भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी प्रक्रियाओं का सूत्रपात किया । शिक्षा संबंधी बहुत से निर्णयों को खण्ड स्तर पर संभव बनाया । विभिन्न संस्थाओं एवं लोगों को प्रतिबद्धता एवं स्वतंत्रता पूर्वक कार्य करने के अवसर उपलब्ध करवाये । दूसरे शब्दों में शिक्षा के क्षेत्र में जनतांत्रिक प्रक्रियाओं, निर्णयों में भागीदारी एवं विकेन्द्रण के लिए अवकाश का सृजन किया। इसी अनुपात में केंद्रीय नियंत्रण एवं नौकरशाही की जकड़नें भी दूर हुई।

स्थानीय लोगों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं की भागीदारी के साथ विकेन्द्रीकृत निर्णय प्रक्रिया का आरंभ राजस्थान में शिक्षाकर्मी परियोजना के साथ, लोक जुम्बिश से पहले ही, हो चुका था । पर लोक जुम्बिश ने इस दिशा में अधिक सघन एवं व्यापक प्रयत्न किये । अत: इस का प्रभाव भी अधिक व्यापक एवं गहरा हुआ ।

लोक जुम्बिश एवं शिक्षाकर्मी परियोजनायें राजस्थान में ऐसी पहली परियोजनायें थीं जो सरकार द्वारा समर्थित भी थीं और जिनमें निर्णय प्रक्रियाओं को अधिक खुला, लचीला एवं जनतांत्रिक भी बनाया गया। दोनों ही स्वायत्तशासी निकायों के माध्यम से संचालित भी रही हैं । इन परियोजनाओं में बहुत सी खामियां एवं कमियां रही हो सकती हैं । उनकी विवेचना करना एवं उन्हें दूर करना एक महत्वपूर्ण काम भी है। पर यह काम इन परियोजनाओं, खास कर लोक जुम्बिश के सकारात्मक जनतांत्रिक पहलुओं को बचाये रखते हुए, बल्कि उन्हें और सुदृढ़ बनाते हुए किया जाना चाहिये। सरकार द्वारा संचालित नियंत्रित शिक्षातंत्र का जनतांत्रिकरण एक दुरूह प्रक्रिया ही हो सकती है। यह बहुत महत्वपूर्ण भी है । इस में कठिनाइयां भी बहुत हैं । अत: जनतांत्रिक प्रक्रियाओं के लिए जितना भी अवकाश बनाया जा सके तथा इसमें जितनी भी सफलता मिल सके वह बहुत मूल्यवान है। उसे खोना, उस अवकाश को फिर से अवरुद्ध करना एक प्रतिगामी एवं गैर-लोकतांत्रिक कदम होगा । यह शिक्षा जगत के लिए अशुभ होगा । शिक्षा के सार्वजनीकरण एवं उसकी गुणवत्ता के विकास में बाधक होगा ।

पिछले लगभग छह माह के घटनाक्रम से यह स्पष्ट है कि शिक्षा की व्यवस्थाओं में यह लोकतांत्रिक अवकाश खत्म किया जा रहा है। पहले लोक जुम्बिश कार्यक्रम को बन्द करने संबंधी वक्तव्य दिये गये। इस पूरे कार्यक्रम के भविष्य को लेकर अनिश्चितता पैदा की गई। यह ठीक है कि मई, 98 में परमाणु परीक्षण के बाद स्वीडिश सरकार ने लोकजुम्बिश को अनुदान देना बन्द कर दिया था। पर अप्रेल, 99 तक आते आते तो डीएफआईडी सीडा की जगह अनुदान देने को तैयार हो गई थी । राज्य सरकार कहती है कि डी एफ आई डी से लोक जुम्बिश के अगले चरण हेतु अनुदान लिया जा रहा है लेकिन उस दिशा में कार्य की गति अत्यंत धीमी है ।

लोक जुम्बिश पर आघात की इस सारी प्रक्रिया की शुरूआत भी अपने आप में एक विचारणीय मुद्दा

बनती है । एक मंत्री विशेष इस प्रकार के वक्तव्य देते रहे हैं कि लोक जुम्बिश को बंद करेंगे तथा मुख्यमंत्री दूसरी तरह के वक्तव्य देते रहे । कुछ ही दिनों में यह एकदम स्पष्ट हो गया कि एक प्रभावी मंत्री और नौकरशाही का एक गुट है जो इस परियोजना और इसके माध्यम से चलने वाली प्रक्रियाओं को ध्वस्त करना चाहता है। एक लोकतंत्र में व्यक्ति विशेष के पूर्वाग्रहों के आधार पर शिक्षा की परियोजनाओं के बारे में निर्णय होने लगे और निष्पक्ष समीक्षा को एकदम नकार दिया जाये - यह अपने आप में ही दुर्भाग्यपूर्ण एवं दूरगामी दुष्परिणाम वाली बात है ।

लोक जुम्बिश परिषद् एक स्वायत्तशासी परिषद् है । कार्यक्रम के संचालन का निर्णय परिषद् का ही है। इसका अध्यक्ष इसके संविधान के मुताबिक सरकार से बाहर का कोई शिक्षाविद् या शिक्षा के प्रशासन में अनुभवी व्यक्ति होना चाहिये । हाल ही में इस की अध्यक्षता उसी शासन सचिव को दे दी गई है जो सरकार की तरफ से लोक जुम्बिश के कार्यों की देखभाल के लिए भी जिम्मेवार है । तो स्वायत्तता का अर्थ ही क्या रहा ? साथ ही अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष भी एक ही व्यक्ति है ।

इसी तरह डीपीइपी, शिक्षाकर्मी योजना एवं लोक जुम्बिश का निदेशक भी एक ही बनाया गया है । इन तीनों कार्यक्रमों का चरित्र पर्याप्त भिन्न है । इनकी संकल्पना एवं कार्य-पद्धतियां भी भिन्न हैं । तीनों कार्यक्रमों के लिए एक ही निदेशक बनाये जाने को पूर्व में मंत्री महोदय द्वारा दिये गये वक्तव्यों से जोड़ कर देखने की जरूरत है। उन्होंने एकाधिक बार कहा है कि राज्य में शिक्षा की एक ही परियोजना चलनी चाहिये तथा शिक्षा भी एकरूप ही होनी चाहिये । अर्थात् प्रयत्न एकरूपता, केन्द्रीकरण एवं पूर्ण नियंत्रण की तरफ है । परियोजनाओं को नाम के लिए अलग अलग रखना 'बजट अलोकेशन' की सुविधा भर के लिए है, क्योंकि ये दो परियोजनायें पहले से चल रही हैं । यह लोक जुम्बिश एवं शिक्षाकर्मी के 'डीपीईपीकरण' का प्रयत्न है जो अन्ततः इन कार्यक्रमों में जन सहभागिता के तत्वों को तथा संकल्प के साथ काम करने की कोशिशों को खत्म कर देगा ।

इस सारे घटनाक्रम में राजस्थान के 75 विकास खण्डों में लाखों बच्चों की प्राथमिक शिक्षा अव्यवस्थित हुई है । पुस्तकें नही पहुंचने से लेकर शिक्षक प्रशिक्षण नहीं हो पाना एवं सहज शिक्षा केन्द्रों का बन्द होना या न खुल पाना इस अव्यवस्था के कुछ रूप हैं । गांव के स्तर पर शिक्षा के नियोजन एवं प्रबंधन में समुदाय की भागीदारी घटी है एवं अभी और भी खतरे हैं । विकेन्द्रीकरण पर विपरीत प्रभाव पड़ा है एवं निर्णय प्रक्रिया फिर से केन्द्रित हुई हैं । बात सिर्फ इतनी नहीं है यह प्रतिगामी कदम शिक्षा में जनसहभागिता एवं लोकतंत्रीकरण के लिए किये जाने वाले सभी भावी प्रयत्नों पर विपरीत प्रभाव डालेगा । यह प्रभाव सिर्फ राजस्थान तक सीमित नहीं रहेगा। इसका राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रभाव होगा। एक बात यह स्थापित होगी कि राज्य सरकारें जब चाहे तब किन्हीं भी योजनाओं को अपनी मर्जी के मुताबिक तोड़-मरोड़ सकती हैं या बन्द कर सकती हैं। अर्थात् शिक्षा के क्षेत्र में किये जाने वाले सभी प्रयत्न राज्य सरकारों की कृपा दृष्टि पर निर्भर हैं और सरकार के किसी एक मंत्री का कोप भी उन को ध्वस्त कर सकता है।

इस पृष्ठभूमि में हमारा मानना है कि इस मसले की गंभीरता को समझने वाले लोग मिल कर स्थिति का विश्लेषण करें । विश्लेषणोपरान्त आवश्यकता समझें तो इस प्रकार की प्रतिगामी धारा के विरोध की संभावनायें भी खोजें एवं कोई सुविचारित कार्य योजना बनायें।

❑ रोहित धनकर